कुल पृष्ठ-14

K. L. Anand
TECHNICAL DIRECTOR

**united oil mill machinery & spares private Ltd.**

OFFICE : D-298, DEFENCE COLONY,
NEW DELHI-24 (INDIA)
Telephone : 623809 & 621201
Cable : "CLAPRAN"

ॐ

२५-८-५८
श्रावन शुक्ल दशमी-२०१५
रविवार

# "पुण: दर्शन"

ले. कस्तूरीलाल आनन्द

~~[illegible]~~

१९४४ की बात है - लिख रहा हूं १९५८ में। इस बीच के कुछ संस्मरण जो याद हैं, उनको लिखता हूं। अबतक जब भी उन १९४४-४५ के दिनों की याद आती है विशेष आनन्द का अनुभव होता है, इसी कारण तो यह लिखता हूं।

स्यालकोट शहर मे हर रविवार मन्दिर श्री राम तलाई में भगवान श्री कृष्ण मन्दिर के सामने वाले हाल में कथा-कीर्तन का प्रोग्राम होता था। वहां मैं भी श्री गीता भवन के अन्य प्रेमियों के साथ जाता था। सतसंग के फल मिलने का दिन ही समझो आ गया। एक ऐसे ही रविवार को (1944 के अश्विन नवरात्र हो चुके थे) मन्दिर में श्री सरदारी लाल जी के साथ जाते हुए मन्दिर में ही एक कमरे में ठहरे हुए एक महात्मा जी के दर्शन हो गये। जाते जाते साधारण प्रणाम कर कीर्तन में चला गया। उनकी नज़र पड़ जावे, यही बड़ा सौभाग्य है, बस ऐसी ही कृपा दृष्टि उनकी पड़ने से कीर्तन में उनका ख्याल आता रहा। कीर्तन के बाद कुछ उपदेश का प्रोग्राम होता था। उस के लिये मैं ही सौभाग्यवश उन महात्मा जी के पास उपदेश देने की प्रार्थना करने को गया। उन्होंने बड़े ही मीठे शब्दों में वहां आने से इन्कार कर दिया। बाकी प्रोग्राम समाप्त कर मैं और भी कई सतसंगी भाईयों के साथ फिर उनकी सेवा में उपस्थित हुआ — वहां उनके पास एक और महात्मा जो प्राय: कम बोलते थे और अवधूत सी अवस्था में थे — विराजमान थे (पीछे पता चला कि वह श्री रामतीर्थ जी थे — ~~जो भरतपुर निवासी~~ थे — जो उनको मिलने की चाह से ही घूम रहे थे)। वहां बात चीत में उन महात्मा जी ने (जिनको मैं तबसे 'श्री स्वामी जी' कहने लगा — ~~और आगे भी उनके लिये 'श्री स्वामी जी' या 'श्री जी' का ही प्रयोग करूंगा~~) श्री गीता जी के ११ अध्याय के ५४ श्लोक का अर्थ समझाते हुए 'ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप' का बड़े ही प्रेम से और विद्वत्ता पूर्ण अर्थ किया, जिसका प्रभाव वहां सभी उपस्थित गीता प्रेमियों पर पड़ा। मैं तो अब समझता हूं कि उनका स्यालकोट में आना शायद मेरे ही लिये हुआ हो। इस बार उनके उसी दिन के तीसरे दर्शन थे, और अब की बार तो उनके पास ही बैठने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। मैं अर्थ सुनता था, उनकी तरफ देखता था,

Works : 24th Milestone Delhi Mathura Road, Ballabgarh (Haryana) Tele : 88450 & 88475

और उसके साथ साथ खिड़कीसे बाहरके पीपल वृक्षको देखता था। उस समय मेरे मनकी अवस्था मुझे तबसे आजतक याद ही नहीं आती - हो सकता है मनकी कोई अवस्था ही नहीं हो तो यह शांत ही थी; इसलीये कुछ याद नहीं।

श्री स्वामी जी का तबका रूप बड़ा ही आकर्षक था। हलके गैरुवे रंग के उनके वस्त्र थे, पासमें ही एक चिप्पी तथा एक बड़ा सा सोटा पड़ा था। साधारण वस्त्र का बिछा हुआ उनका आसन था, उसपर वह दृढ़ आसन से बैठे थे। उनका विशाल मस्तक, बड़े बड़े कान, शांत मुख मुद्रा और सब से बढ़कर उनका देखना बस यह उनही जैसा है एक कविने ठीक ही लिखा है

— न देखने की नजर में कुदूरत न दूर रहनेका दिलपे काबु —

थोड़ा समय वहां उस शान्तिका लाभलेहम सब अपने अपने घरों को चले गये। खाना खानेके बाद हम लोग फिर गीता भवन में सतसंग कीर्तन के लीये आते ही थे। वहां जब सब आ गये तो सबने यही रायदीकि उन स्वामीजी को यहाँ आने की प्रार्थना करें। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि उनके दर्शन करनेके बादसे तबतक सब उनको ही सोचते रहे हैं। तब उसी समय सब गीता प्रेमियों के साथ मैं फिर उनकी सेवा में हाजिर हुआ। उनसे गीता-भवन आनेकी प्रार्थना की। श्री स्वामी जी किसीके घर में रहना नचाहते थे। उनको बताया कि वहां सतसंग के लीये २ कमरे-रसोई का मकान किराये पर लिया है, वहां एकांत होहै, तब उन्होंने चलकर देख आनेको मान लीया। सबको बड़ी प्रसन्नता हुई। उनका सामान क्या था—एक छोटा सा आसन या बिस्तर जो बग़ल में आजाता था, एक झोला, एक चिप्पी तथा सोटा। इस तरहसे उस रविवार को उनके चौथी बार दर्शनकर हम उनको गीता भवनमें ले आये।

रातको रोज गीता भवन में सतसंग कीर्तन होताथा, वहां उस दिन श्री स्वामी जी को प्रार्थना की कि आप कुछ उपदेश देवें, पर उन्होंने कहा कि आपलोग जो करते हो करें और श्री स्वामी जी छत पर विश्रामके लीये चले गये। इसी तरह आप २-३ दिन वहां रहकर वहां के कार्यक्रम को देखते रहे, हम रोज़ उनसे कुछ कहने को कहते थे, पर आप बड़े प्रेम से ना कर देते थे। सो एक दिन उन्होंने बड़ी कृपा कर हमारी प्रार्थना स्वीकार कर सतसंग में आ गये।

मैं ने प्रार्थना की कि महाराज कुछ उपदेश देवें — तब उन्होंने कहा कि कुछ उपदेश। का क्या अर्थ होताहै, उपदेश तो जिज्ञासुकी जिज्ञासा पर ही होना चाहीये, जैसे औषधी का निर्णय तो रोगीके रोगके अनुसार ही होगा। बात बड़ी ठीक कही उन्होंने। तब मैं ने गीताजी के किसी श्लोक की व्याख्या करनेकी प्रार्थना की। उसका उत्तर उन्होंने दिया कि आप किस अध्यायका कौन सा श्लोक सुनना चाहते हैं, तब मैं ने कहा कि १५ अध्याय का पांचवा श्लोक। तब उन्होंने कहा कि मैं श्लोक पढ़कर सुनाऊं — मैं ने श्लोक सुनाया, तब आप फिर कहने लगे कि इसका जैसा भी अर्थ मुझे आता है - मैं कहूं - तब मैं ने उसका अर्थ किया — इस प्रश्नोत्तर मैं मैं उनके कितना नजदीक आ रहा हूं, इस बातको अनुभव अब होता है। उस वक्त तो आपजैसा कहतेगये मैं करता गया। तब आपने बड़ी कृपा कर इस गुह्य शास्त्र (१५ अध्याय) के ५वें श्लोक का बड़ ही विस्तारसे अर्थ समझाया। वहां हम रोज ही गीता पर कोई न कोई टीका

पढ़ते थे, वहां आये कई महात्माओं से गीता जी के अर्थ भी सुनते थे, पर वैसा अनुभवयुक्त अर्थ हमारे को सुनने का न मिला था। हम सब प्रसन्न थे — इसी बात पर कि इस से हमें रोज़ कितना अच्छा अच्छा उपदेश सुनने को मिलेगा। सतसंग समाप्त हो सब लोग अपने घरों को चले गये। श्री स्वामी जी के साथ अपने श्री सरदारीलाल जी वहां ही रहते थे।

दूसरे दिन फिर रातको हम सब बड़े चाव तथा उत्साहसे सतसंग के लिये इकट्ठे हुए कि देखें आज कैसी अमृत वर्षा होती है। श्री गीता जी के पाठ के बाद फिर स्वामी जी को उपदेश की प्रार्थना की गई। उसका उत्तर जो उन्होंने दिया वह आजतक हृदय में है, और तबसे किसी से कुछ पूछने की विशेष प्रवृत्ति ही नहीं होती। (हां अब उनसे पूछने में ज्यादा संकोच नहीं, पर आप कृपा कर स्वयं ही इतना बता देते हैं, और उनके इन १४ वर्ष के परिचय से कुछ पूछना बाकी नहीं रहा — कमी है तो अपने करने में ही — उसकी जब जैसी पूर्ति होनी है, वह भी आप ही जानते हैं। बच्चा मां की गोद में चला जावे यही उसका सौभाग्य है, फिर और चिंता उसको क्या करनी है — अब भी जब जो चिंता मैं कभी करता भी हूं वह सब पहले स्वभाव दोष से ही है — उनके उपदेश - सतसंग के थोड़े विचार से निश्चिंतता प्राप्त होती है - अस्तु)
आप ने उस समय जो कुछ फरमाया वह इस प्रकार है "कई आदमीयों को उपदेश सुनने का रोग सा होता है। उसी तरह कई महात्माओं को भी उपदेश देने का भी रोग सा ही होता है। मैं उनमें नहीं जो उपदेश देते ही रहते हैं। हां किसी का सतसंग सम्बन्धी कोई <u>अपना</u> प्रश्न हो, वह पूछे, उसमें कुछ कहने की ज़रूरत हो तो मैं कह सकता हूं। कल आपको एक ही श्लोकसे उस अव्यय पद की प्राप्ति का मार्ग ~~बताया था। क्या आप सबने उस पर कुछ विशेष मनन किया~~ — क्या कुछ अनुभव किया — अगर नहीं तो और कहने का क्या लाभ होगा। फिर भी आप सब की इच्छा है तो फिर उसी श्लोक के पहले दो ही गुणों का वर्णन आज फिर किया जाता है — वह हैं — निर्मान मोहः — मान और मोह रहित होना। इस पर कल सारा दिन विचार करें जो आप में से आकर कह देगा कि मैं आज सारा दिन अपने व्यवहार कालमें मान और मोह से रहित रह सका हूं, उसी को आगे उपदेश होगा — वैसे नहीं होगा"

तब उन्होंने बड़े ही विस्तार से मान और मोह से रहित जीवन पर व्याख्या की। उन्होंने उसे हर एक कैसे अपने जीवन में ला सकता है, वह व्यवहारिक ढंग भी बताए। बड़ी सुन्दर व्याख्या थी (~~तबसे आजतक न तो हमने छाती पर हाथ रखकर कहा कि हम मान और मोह से रहित हो गये और नाही आगे उस तरह के उपदेश सुने — कैसे~~ उनकी कृपा से कई कई तरह जीवन को उच्च ज्ञानमय बनाने के साधन उनसे सुनने को प्राप्त होते रहे ~~अब भी हैं।~~) उसके बाद हम में से किसी ने यह दावा नहीं किया कि महाराज मैं मान और मोह से रहित हो गया हूं, मुझे आगे को बतायें।

इसी तरह रोज़ सतसंग होता था। उनकी हर बात चीत से उपदेश ही मिलता था, जल्दी ही कार्तिक मास आ गया और श्री स्वामी जी ने कार्तिक का सारा महीना ही मौन धारण रखा। आप सतसंग में बैठते थे — सतसंग पहले की तरह चलता था, उनके वहां रहने से भी हम सब को विशेष उत्साह रहने लगा।

श्री स्वामी जी का शरीर ज्यादा सुदृढ़ नहीं था, लेकिन चेहरे पर एक विशेष ही चैतन्य था। अपने को तो पता नहीं क्या बात थी कि श्री स्वामी जी के सिवा कुछ अच्छा ही नहीं लगता था उस वक्त हम सब किसी विशेष कारण से उनकी तरफ खिंचे जा रहे थे। यह उनकी अपनी कृपा ही थी। हम वहां सब आने वाले महात्माओं का आदर सतकार तो करते ही थे, पर कई एक ऐसी घटनाऐं घट चुकी थी जिनसे हम सतर्क से रहते थे. इसीसे कुछ कुछ आलोचनात्मक स्वभाव भी सबका बन ही गया था। पर श्री स्वामी जी के लीये किसी को कभी कुछ कहने का मौका न मिला। सभी उनसे प्रेम आदर करते थे। इस बारे में मुझे याद आता है कि एक बार दो व्यक्तियोंने उनके बारे में कुछ कहा था, पर उसका कुछ बना नहीं, फिर भी मैं आगे इसका उल्लेख करूंगा। मौन में एक बार स्वामी जी के कमर में दर्द हुई थी, तब माता जी ने उनके लीये कमरकस (एक औशधी) की खीर खाने को दी थी। इसी मौन अवस्था में उनके हाथका एक कागज पर कुछ लिखा हुआ अभी तक मेरे

१ मेरे पास है (~~[illegible] उसकी photostat साथ भेज रहा हूँ~~) । श्री स्वामी जी के खान पान का हम विशेष ध्यान न रख सके, जो घरमें बनता था, वही आप ले लेते थे। आपको लाल मिर्च अच्छी न लगती थी, आप खानेसे मिर्चोंके बीज चुनकर निकाल दिया करते थे। भोजन आप एक समय ही करते थे। आपको आमले विशेष प्रिय थे। इसी पर याद आता है कि हमारे पूछने पर कि महाराज आपका नाम क्या है या हम किस नामसे आपको याद रखेंगे तो आपने कहा था कि मुझे "आंवलेवाला महात्मा" इस नामसे याद कर लेना। भोजन वगैरह का विशेष प्रबंध न होने पर भी उनको स्यालकोट का जल वायु अनुकूल ही आया, इसी लीये और अब ख्याल आता है कि हम पर विशेष कृपा से आप लगभग छ मास वहां रह गये। ~~इस वक्त भी सब बातें न तो याद रही हैं, फिर भी सोचकर लिखा जावे तो बड़ा विस्तार हो जावेगा।~~

मौन के बाद हमारे सतसंग का और ही रूप हो गया था। श्री गीता पाठके बाद बहुत सा समय श्री स्वामी जी की बातें सुनने में ही बीतता था। बातें सभी को प्यारी लगती थीं। सब इस तरह सुनते थे कि छोटे बच्चे अपने मां बापसे कहानियां सुन रहे हों। कहानियों में कशमीर का काफी ज़िकर आता था। वहां के कई सिद्ध महापुरुषों के जीवनकी बड़ी अच्छी अच्छी बातें सुनने को मिलीं। आप कई बार अपने बारे में हुई घटनाओं का भी ज़िकर करते थे, पर हम एक बात नोट करते थे कि आपने कभी किसी व्यक्ति या शहर का नाम ऐसे नहीं लीया जिससे उनके बारेमें पता चल सके कि आप कौन हैं, कहां से आये हैं, कहां रहते हैं, इत्यादि कई बार पूछने पर उन्होंने यही उपदेश दिया कि महात्माओं को यह पूछना नहीं चाहिये, तबसे हम ने पूछना छोड़ ही दिया।

मेरा घर सतसंग के नजदीक था, और जहां मैं काम करता था, वह जगह भी दूर न थी। सवेरे उठकर नहाने इत्यादिके लीये गीता भवन ही चला जाता था, और वहां से ऐसे समय घर आता था कि कपड़े बदल, नाशता कर, कारखाने के वक्त पर पहुंच जाऊं, और यह सब काम मैं कोई १५-२० मिनिट में ही कर लेता था। दोपहर की खाने की छुट्टी में भी जलदी ही खाना खाकर श्री स्वामी जी के पास आ जाता था ~~(बातें होती थी। प्रायः इस समय बातें ही होती थी)~~। शाम को छुट्टी के बाद फिर उनके दर्शन होते थे और रात को खाना खाने

आध्यात्मिक

के बाद सतसंग में उनके पास बैठकर बातें सुनते थे। रात १० बजे आरती कर सतसंग समाप्त होता था। इसके बाद भी प्रायः रोज़ ही ११–११½ और कभी कभी १२ बजे तक चर्चा होती रहती थी। (इन वक्त की बातों से पता नहीं क्यों एक बार दो व्यक्तियों को अच्छा नहीं लगा, इन्होंने विरोध किया कि अब सतसंग तो कुछ होता नहीं, बस बातें ही बातें होती हैं। इसका विशेष असर हुआ नहीं, बातें वैसी ही चलती रहीं।)

श्री स्वामी जी, विशेष विद्वान हैं – यह तो यथार्थ विद्वान ही जान सकते हैं, परफिर भी हमने तबतक जो कुछ सुना, देखा, उसके आधार पर कह सकते थे कि आप उच्च कोटि के विद्वान हैं। श्री सरदारी लाल जी संस्कृत पढ़ते थे, एक बार श्री स्वामी जी के कहने पर उनके लिये संस्कृत व्याकरण का अमर कोश लाया था। श्री स्वामी जी को सब कंठस्थ था। वैसे विद्वान होते हुए भी श्री स्वामी जी सरल स्वभाव के थे। आप हर बात सच्ची सच्ची कहते थे किसी तरह से बढ़ा चढ़ाकर बात करना, यह उनका स्वभाव न था – यह हमको तभी पता चल गया था। आपकी बातों से पता चलता था कि आपका लालन, पालन किसी विशेष सम्पन्न और अच्छे पंडितों के घर में हुआ है। आपने अपने जीवन की कई घटनाएँ बड़े ही सरल भाव से सुनाई थी, पर किसी से उनका परिचय न मिलता था, हमने इसकी जिज्ञासा भी छोड़ दी थी।

मैं तो हिन्दी भी अभी तक शुद्ध नहीं लिख सकता – विद्वानों की बात क्या जानूं। मुझे तो उनसे मिलने से एक विशेष ही आनन्द मिलता था, यह मैं अब जानता हूं। उस वक्त तो आनन्द आता है या नहीं आता है – यह भी सोचने की गुन्जाइश न थी, बस यही प्रयत्न होता था कि उनके पास रहें – उनकी बातें मुझे अच्छी गुणों से सभी प्यार करते हैं, और दोष निकालने वाले तो गुणों में भी दोष निकाल सकते हैं। अपना स्वभाव भी कुछ छान बीन करने का था, पर श्री स्वामी जी के लिये दूसरी ही बात थी। मुझे तो उनके पास रहना है, बातें सुननी हैं, और उनके पास न रहने पर सुनी हुई बातें याद करनी हैं, बस यही मानों मेरा काम था। इससे घर वालों को कुछ चिंता भी हो गई थी कि मैं शायद कहीं भाग न जाऊं और एक बार यही चिंता बड़ा भयानक रूप धारणकर सामने भी आई, जिससे श्री स्वामी जी पर वृथा ही माता जी ने रोष दिखाया था, पर इसका कोई असर न हुआ। मेरे दिल में उनका प्यार बढ़ता ही गया। मैं आज १८ वर्ष बाद जब यह लिख रहा हूं, साथ साथ सोचता हूं कि इसका कारण क्या था। कुछ समझ न आते हुए भी कुछ कुछ समझ आता है। श्री स्वामी जी आत्मरूप से सभी के अपने ही हैं, इस लिये उनसे प्रेम बढ़ता थी। संसार के प्रेम में स्वार्थ भरा है, इसका अनुभव मुझे अपने जीवन से हो गया था। श्री स्वामी जी भी मुझे प्रेम करते थे, यह भी मैं सुनता था। मुझे इन दिनों कारखाने के काम से कई बार लाहौर जाना पड़ता था, तब श्री तिलकराज जी के साथ सैर करते स्वामी जी सैर को भी याद करते थे, इससे मेरा प्यार बढ़ता था। मुझे पहली बार ही निस्वार्थ प्रेम की कुछ प्राप्ति हुई। मेरा स्वभाव कुछ भावुकता का था, इसलिये भी मैं उनसे प्यार करता था। श्री स्वामी जी ऐसे ही थे कि उनसे प्यार किया जावे, तभी मैं भी करता था। वैसे मैं क्या करता था, यथार्थ तो यह कि वही करते थे। कुछ कर तो स्वतंत्र ही सकता है, परतंत्र भला क्या करेगा। इन १८ वर्षों पर फिर से

विचार करने पर पता चलता है कि स्वामी जी मेरे सभी [कुछ] रहते थे। गुरु, सज्जन, मित्र, भाई, बहिन, माँ सभी तरह का प्रेम का मैंने उनके साथ रह कर अनुभव किया। पिछले जन्म को मैं मानता हूँ और सुना भी है कि कई बार पिछले सम्बंध के कारण भी प्रेम होता है। सो ऐसा भी लगता है कि पिछले जन्म में उनके साथ सम्बंध रहा हो। इससे कोई यह न समझे कि मुझे पिछले जन्म की याद है। भगवान यह याद भुला देते हैं, यही उनकी कृपा है। इसी जन्म की बुरी घटनाएँ याद कर जब सुखी दुखी होना पड़ता है, तब तो यह भगवान की सब पर कृपा ही है कि पिछले जन्मों की याद नहीं। कुछ भी हो श्री स्वामी जी ने मुझे अपनाया, इसकी याद कर मेरा मन अब भी प्रसन्न हो जाता है।

उन दिनों श्री स्वामी जी से कई एक नये ग्रन्थों के नाम सुने। उनके कहने से एक बार "विज्ञान भैरव" लाहौर से लाया था। बड़ी अच्छी अच्छी धारणाएं उसमें दी थी। श्री स्वामी जी से उनका विस्तार से अर्थ सुनने को मिला। श्री स्वामी जी संस्कृत के कई सुन्दर सुन्दर श्लोक सुनाते थे, फिर उनका अर्थ कर समझाते थे (आप जब श्रीमद्भागवत के

1 | सतां प्रसंगान्मम वीर्यसंविदो भवन्ति हृत्कर्णरसायनाः कथाः। या रहूगणैतत्तपसा न याति न चेज्यया निर्वपणाद्गृहाद्वा ।।

श्लोक सुनाते थे तो उनकी मुख मुद्रा देखने योग्य ही होती थी। महत्पादरजोभिषेकम् का सही अनुभव उन्हों ने किया है, यह उनकी तरफ देखने से पता चल जाता था। एक और श्लोक ~~सुनाते समय कहते थे कि एक पुस्तक के चौथे अध्याय का श्लोक है यह श्लोक~~ इतनी बार सुना कि याद ही हो गया। वह था —

याम् आमनन्ति मुनयः प्रकृतिं पुराणीं विद्येति यां श्रुतिरहस्यविदो वदन्ति ।
ताम् अर्धपल्लवितशंकररूपमुद्रां देवीमनन्यशरणः शरणं प्रपद्ये ॥

इसी पुस्तक का एक और श्लोक जब आप सुनाते थे, तो ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे कोई अपनी देखी बात कह रहा हो। इस श्लोक का विशेष भाव तो न तब समझ आया और न अब ही, पर यह श्लोक उनको बड़ा प्यारा था, यह तब भी पता चलता था और अब भी। वह था —

कल्पद्रुमप्रसवकल्पितचित्रपूजामुद्दीपितप्रियतमामदरक्तगीतिम् ।
नित्यं भवानि! भवतीमुपवीणयन्ति विद्याधराः कनकशैलगुहागृहेषु ॥

इसी तरह रोज नये नये भाव पूर्ण श्लोक, महात्माओं के जीवन चरित्र, कई पुराने इतिहास, कई नई नई हुई आध्यात्मिक घटनाएं, यह सब उनसे सुनने को मिलता था। आप स्वतंत्र विचार ही प्रगट करते थे, वह हमें जंच जाते थे, यह उनकी कृपा ही थी। अद्वैत सिद्धांत को समझाने का उनका ढंग शास्त्र सम्मत होने पर भी निराला ही होता था। जब कभी वह अपने ही जीवन की कोई घटना बताते थे, तो पता चल जाता था कि आप हर बात को बिना ही बढ़ाए, घटाए बता रहे हों। क्योंकि उनने कई बार ऐसे भी वृतांत प्रसंग से बताए, जो प्राय: जिनको कोई मान आदर करे — वह नहीं बताते।

2) [illegible] आप यथार्थ सच्ची ही बात करते हैं।

इन सब बातों से हमें विश्वास पक्का हो जाता था कि आप यथार्थ सच्ची ही बात करते हैं। आपने अपने जीवन के कई एक दिव्य घटनाएं भक्तों को बताई, तो उनपर भी स्वभाविक ही सुनने वाले का विश्वास होता था। उनमें कई बातें तो ऐसी हैं कि जब कोई विद्वान उनको

चरित्र लिखे, तो उनको ठीक ढंगसे लिख सकता है, इसीलीये मैं उनका उल्लेख नहीं कर रहा, ~~सिरफ नोट करनेके लीये ही मैं उरदूमें यहां कुछ लिख रहा हूं ताकि हर कोई इसे न पढ़ सके। (Note अब भाग: सब बातें उनकी अपनी लिखी पुस्तकों में आ भी गई है — २१/८५)~~

اپنے پورو جنم کی باتیں - ۳ جنم کی یادداشت - ولایت کے درشن - پانچ کوششوں کے درشن - بھگوان کرشن سے گیتا پڑھنا - [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

जहां आप मन और आत्मा की पवित्रताका पूर्ण ध्यान रखते थे, वहां बाहर की सफाईका भी विशेष ही ध्यान रखते थे। कपड़े, कमरा, हाथ, पाऊं व जो कुछ भी उनके नजदीक चीज़ आती थी उसकी स्वच्छताका आप ख्याल रखते थे। एक बार आप गीता भवन पर ठहरे हुए थे, तब आपने वहां की सीढ़ियोंको स्वयं ही जलसे ऐसा साफ धो दिया कि सभी दंग रह गये। हम तो कभीकभी वैसेही झाड़से सफा कर देते थे, पर तबसे हम वहांकी हर चीज़की सफाई का ध्यान रखने लग गये

उनके आनेसे पहले हम गीता ज्यन्ति पर रथ निकालना, श्री कृष्ण तथा श्रीराम जन्मोत्सव मनाना, श्री गीताजी के प्रचारके लीये हिन्दी तथा गीता जी की क्लासें लेना, राम तलाई मन्दिरमें गीता जी की कथा कहना, इत्यादि बहुतसे प्रोग्राम ऐसे करते थे, जिनसे लोगों का कल्याण होगा, प्रचार होगा, इत्यादि भावनाऐं थी। इस सबके लिये अर्थ संचयमें विशेष ध्यान रखते थे कि अपने ही परिचित, तथा गीता प्रेमीयोंसे ही कुछ लीया जाता था। हमारा सब कार्य बड़ी ही अच्छी तरह चल जाता था। हम दूसरी सभी सुसाईटियों की तरह चुनाव वगैरह के हकमें न थे ~~जिसी कारण बन गया जिस से श्री विद्यानन्द जी (वहां के एक महात्मा) व उनकी शिष्य मंडली हमसे नाराज हो गई। वह लोग भी कहते थे कि कन्हैयालाल व श्री सरदारी लाल जी तो एक ही राय होती है, वह जो चाहते हैं होता है— इसलीये वह लोग तबदीली चाहते थे। इन सब बातोंसे~~ हमें बाहरी प्रचारसे कुछ उदासीनता सी रहती थी। रही सही कसर श्री स्वामी जीके आनेसे पूरी होगई। अन्धा अन्धेको रास्ता दिखाए, तो दोनो ही अन्धेरे कूंऐमें गिरें। इस बातकी तरफ ध्यान होने लगा। 'श्री' जी के आनेसे बाहरी दिखावेके कामसे ही छुट्टी मिलगई।

सरदी ज़ोर की हो गई थी। एक दिन 'श्री' जी १५-२० दिनके लीये श्री वैष्णवी देवी की यात्रा का विचार किया और चलेगये। यात्रा कर वहां देवी मंदिर से ऊपर एक महात्मा की कुटीमें चन्द दिन रह कर वापिस आ गये। फिर सतसंग उसीतरह चालू होगया। तरह तरह की बातें होती थी, जब महापुरुषों की बड़बड़ाहट ही वेद है, तो वह बातें कैसी भी हों, उनसे लाभ ही होता था।

आप बहुत कम सोते थे। एक बार मैं ने पूछा कि मेरे लीये जो कि महनत का काम करता हूं, ८ घंटे नींद की ज़रूरत तो हैही, तब आप ने बताया कि ठीक नींद लेने का ढंग आ जावे तो २ घंटे भी काफी हैं। उनके पास रहते से नींद में कमी का अनुभव किया। उससे कोई नुकसान न हूआ। आप बातों ही बातों मे उपदेश देते थे। गुरु शिष्य बनाना उनको अच्छा नहीं लगता था। आप कहते थे कि दूध भी गंदे बर्तनमें नहीं डालते, तो यह ब्रह्मविद्या क्या ऐसे ही हर एक को दी जा सकती है।

एक बार जब मैं ने कुछ विशेष जानकारी की इच्छा प्रकट की तो आपने ४ महीने ब्रह्मचर्य से रहो तब बताएंगे, ऐसा कहा। मेरा वैसा करने पर आपने कुछ बताया था। थोड़े रोज़ उसका अनुभव किया फिर प्रमादवश वह छूट सा गया। अब भी जब आप (श्री) मिलते हैं उसी को करने का कहते हैं—वैसे वह करना क्या है— कुछ न करना ही है—जो करने से भी कठिन है—न किञ्चिदपि चिंतयेत् - इतना ही यहां लिखना है।

इसी तरह सतसंग करते, स्वामी जी के उपदेश सुनते समय बीत रहा था। एक दिन अध्यात्मिक पुस्तकों की बातों में आपने लाहौर से 'आत्मविलास' पुस्तक लाने को कहा। मैं लाहौर से वह पुस्तक जिस दुकान से लाने को कहा था—ले आया। पुस्तक निराले ही ढंग से लिखी थी। भाषा अनुवाद भी था, फिर भी समझने में कठिन सी लगी। हमारे प्रार्थना करने पर आपने हमें सतसंग में समझाना शुरू किया। हममें से कोई पुस्तक पढ़ता था, और आप उसका अर्थ समझा देते थे। इस तरह उसमें पहले तीन प्रकरण सतसंग में पढ़े। एक दिन किसी ने पूछा कि स्वामी जी आप इस पुस्तक के लेखक को जानते हैं, तब आपने कहा था कि हां जानते हैं। इससे आगे कोई बात न हुई। एक बार एक सज्जन सं० २००१ या २००२ का एक पञ्चांग ले आये, उसमें एक जगह महात्माओं की जन्म पत्रियां दी थी। उनमें एक पत्री आत्मविलास के लेखक—'आचार्य श्रीमद्भूतवागभव' जी की भी थी। इससे यह तो अनुमान हुआ कि पुस्तक किसी विख्यात महापुरुष की लिखी है। हम प्रेम से उसका पाठ करते थे और स्वामी जी उसका अर्थ कह देते थे। उनकी कृपा से कुछ बातें, अपनी योग्यता के अनुसार बुद्धिगत हुईं। इस तरह सरदियों का मौसम खतम होने को आया। हम सुनते थे कि आप गरमीयों में यहां न रहेंगे। हम चाहते तो थे कि आप हमारे पास रहें, पर उनके तकरीबन ६ महीने यहां रहने से हमें पता चल गया था कि उनकी इच्छा के विरुद्ध हम कुछ नहीं कर सकते—हम करना भी न चाहते थे। एक बार आपने यह भी कह दिया था कि जब मुझे जाना होता है, मैं चला जाता हूं और जाने से थोड़े समय पहले ही बताता हूं कि मैं जा रहा हूं।

उन दिनों मेरे को लाहौर कारखाने के काम से जाना होता था, वहां से वापसी पर पहले यह पता करना होता था कि स्वामी जी यहां ही तो हैं। उनके चले जाने की आशंका मन में खटकती रहती थी। एक बार की बात है कि मुझे ३-४ दिन के लिये लाहौर जाना था—मैं बिस्तर वगैरह साथ लेकर गया। वहां लाहौर पहुंचा तो ३-४ दिन का काम मानो एक ही दिन में खतम हो जावेगा, ऐसा प्रतीत होने लगा और शाम तक यह निश्चय हो गया कि कल कुछ सामान ~~खरीद~~ खरीदकर वापिस स्यालकोट चले जाना है। मैं एक होटल में चला गया। मैं ने एक दो प्रतियां आत्मविलास दूसरे प्रेमियों के लिये मोल ली थीं। मैं कमरे की बिजली बंद कर लेटा था, साथ के कमरे में राजस्थान से पंजाब मैट्रिक की ~~शिक्षा~~ परीक्षा देने के लिये आये कुछ विद्यार्थी बातें कर रहे थे। वहां लेटे लेटे मुझे पता चलता है कि जो आत्मविलास की पुस्तक तुम पढ़ते हो, यह तो उन्हीं महात्मा जी की लिखी है जो हमारे गीता भवन में ठहरे हैं। इस बात का पता मुझे ऐसा हुआ कि उस पर पूर्ण विश्वास हो गया। मैं ने निश्चय किया कि मैं एकांत में यह बात श्री स्वामी जी से कह दूंगा। दूसरे दिन सारा दिन वहां काम कर रात को स्याल कोट चला गया। घर से सीधा सतसंग में गया। आरती के बाद मैं ने श्री स्वामी जी को प्रणाम कर घर जाने की अनुमति मांगी ~~क्योंकि थकावट से मुझको~~ आलस्य आ रहा था।

वैसे और दिनकी आरती के बाद १-२ घंटा बात-चीत होती थी। पर स्वामी जीने कहा कि बैठो, बैठो तब मैं थोड़ी देरके लीये वहां रुक गया। श्री स्वामी जीने कुछ सिद्धांत की बातें कहीं, बात बड़ी उत्तम थी, बड़े उत्तम ढंगसे समझाई भी गयी थी, पर शरीर व मनकी थकावट के कारण मैं उसे ग्रहण न कर रहा था। इस बातको स्वामी जी जान गये और कहा कि अच्छा, तुम्हारा मन नहीं लग रहा, सो जाओ आराम करो। मैं प्रणाम कर घर चला गया और सो गया। अभी मेरी नींद भी न खुली थी कि श्री सरदारी लाल जी ने मेरे घर के नीचे मुझे आवाज़ दी। मैं घबरा कर नीचे चला गया, और वह घबराहट सच्ची निकली, क्योंकि मुझे बताया गया कि श्री स्वामी जी तो जाने को त्यार खड़े हैं और वह सतसंग से नीचे सड़क पर भी आ गये हैं। उस वक्त क्या करना चाहीये यह सोचना मुश्किल होगया। पर स्वामी जी के स्वभाव की थोड़ी जानकारी के कारण, यह तो निश्चय होगया कि अब रुकनेसे रुकेंगे नहीं, सो उनकी राज़ीमें ही अपनी भलाई समझ मैं उनको बसके अड्डे तक छोड़ आनेको त्यार होगया। सतसंग की सीढ़ियोंके नीचे ही खड़े खड़े, जब सरदारी लालजी ऊपर कमरा बन्द करने गये, मैं ने श्री स्वामी जी को बताया कि आपका ही नाम श्री अमृतवागभव जी है। इतनेमें ही श्री सरदारी लालजी नीचे आ गये, तब श्री स्वामी जीने श्री सरदारी लाल जीकी तरफ मुंहकर कहा कि देखो यह कस्तूरी लाल क्या कहता है कि मैं ही अमृतवागभव आचार्य हूं। इसके बाद इस बारेमें फिर कोई बात न हुई। एक तरहसे बात उन्होंने काट दी, और एक तरहसे स्वीकार करलीया, पर इसका पता उसके बाद ही चला कि उन्होंने एक तरह से अपने आप ही कह दिया कि मैं ही अमृतवागभव आचार्य हूं। हम उनको बस पर चढ़ाकर चले आये, जैसे कोई अपनी पूंजी ही गवांकर वापिस चला आवे। श्री तुलसीदास जी ने ठीक ही कहा कि

एक मिलत दारुण दुःख देहीं
बिछुड़त एक प्राण हर लेहीं ॥

वापिस आने पर कई सतसंगी वहां नित्य की तरह आ चुके थे, और जब जब जिसको पता चला कि स्वामी जी चले गये हैं, वह शीघ्र ही सतसंगमें आ गया। सब हैरान थे कि रात १० बजे तक तो इस बातका ख्याल भी न था और अभी प्रातः ५ बजे सुन रहे हैं कि स्वामी जी चले गये। श्री सरदारी लाल जी ने बताया कि स्वामी जी नित्यकी भांति सुबह जल्दी उठकर पाठ पूरा कर, कपड़े लगा, हाथमें सोटा ले खड़े होकर कहने लगे कि मैं जा रहा हूं, कस्तूरी लाल को पता दे दो (यद्यपि वह मेरे लीये छोड़ गये थे, पर पाकिस्तान बनने पर वह नहीं रहा)। अपने प्रमादकी बात याद कर मैं दुःखी हो रहा था कि देखो श्री स्वामी जी किस प्रेमसे रातको कुछ बताना चाहते थे, पर मेरे तमोगुणने ऐसा न होने दिया। इस तरह हम उस दिन और उसके बाद रोज़ ही तरह तरहसे उनको याद करते थे। मुझे लाहौर कमसे जाना होता था, सो सभी प्रेमियों ने कहा कि मैं ही उन्हें छोड़ने गया था, इसलीये मैं ही उनको तलाश करके लाऊं। पर तलाश कहां करूं, कोई नाम पता नहीं, किसी ठिकाने का पता नहीं, कभी किसी जगह उन्होंने पत्र लिखा नहीं, न ही कहींसे उनका कभी कोई पत्र आया। मुझे एक ख्याल था कि आत्म विलास के लेखक आप ही हैं, पर सभी

इससे सहमत न थे, क्योंकि प्राय: लेखक अपने आपको जताते रहते हैं, पर इस तरह अपने को छिपाने वाला हमें कोई न मिला था। जिस बससे श्री स्वामी जी लाहौर गये थे, मैं प्राय: उसी पहली बससे लाहौर जाता था। वह बस लाहौरी गेट के बाहर रुकती थी। वहां उतरने पर मैं वहां खड़ा हो अनुमान लगाता था कि यहां उतर कर श्री स्वामी जी किधर गये, पर कुछ समझ नहीं पड़ता था। एक बार याद आया कि आपने एक श्री सीतला जी के मन्दिर की कोई बात की थी, सो मैं वहां गया, पर मेरे मन का देवता मुझे वहां न मिला।

मैं अपने घर गृहस्थी के सब काम करता था, पर उनकी याद बनी थी। यही एक सहारा था, उसकी याद कर, उनकी बातों को याद कर, उनके ओवले के पुरखे को याद कर, उनकी पढ़ाई पुस्तक आत्मविलास को पढ़कर, हर वहां आने वाले को उनके बारे में बता बता कर हम उनकी याद करते रहते थे। वहां आने वाले साधु महात्माओं से पता करते, पर कुछ पता न चला। एक बार एक ब्रह्मचारी 'श्री दूरगामी' जी जो वहां प्राय: आते थे, उनके सामने उनकी चर्चा की, उनके स्वभाव, उनकी रूप रेखा का वर्णन किया। वह चन्द दिन रह कर अपने किसी मित्र को मिलने जम्मू चले गये। वहां जा कर उन्होंने मुझे पत्र लिखा कि उनके मित्र का एक मित्र जम्मु में है, वह ऐसे ही एक महात्मा जी को जानता है, पर वह महात्मा कई बरसों से उसे मिले नहीं। पत्र मिलते ही मैं जम्मु चला गया और उस व्यक्ति को मिले जो उनको जानता था, उनका नाम 'श्री बलजिन्नाथ' था, वहां एम॰ ए॰ कर अध्यापक की शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। उनसे थोड़ी देर ही बातें करने से पता चल गया कि उन्होंने उन स्वामी जी को बचपन में देखा है, जब वह उनके घर कशमीर में उनके पिता जी के पास आते थे। वहां सारा दिन उन स्वामी जी के स्वभाव की चर्चा करते दिन बड़ा अच्छा गुज़रा। वह बलजिन्नाथ जी स्वयं उन स्वामी जी के दर्शन करना चाहते थे, सो यह निश्चय हुआ कि हममें से जिसको वह मिलें — वह दूसरे को जरूर पता देवे। इस मिलन से यही फल निकला, बाकी उनके नाम ठिकाने का कुछ पता न चला। चलो, उनसे मिले हुए, और उनके लिये आस प्रेम रखने वाले एक और व्यक्ति से परिचय तो हुआ। इसी तरह उनकी चर्चा करते, दिल में उनके मिलन की चाह बढ़ाते समय बीतने लगा — १९५५ बीता, १९५६ आ गया, गरमियां बीत गईं, वर्षा बीत गई, फिर सरदियां आ गईं — श्री स्वामी जी को गये तकरीबन २ वर्ष होने को आये, पर उनका कुछ पता न चला

पढ़ा और सुना भी था कि जिसके मिलने की चाह हो वह जरूर मिल जाता है, पर यहां तो दो वर्ष होने को आये (~~सिवाये उन बलजिन्नाथ के कोई भी ऐसा आदमी नहीं मिला जो उनको मिला हो, या उनका पता बता सके~~)। शक होता था अपने मिलने की चाह की कमी पर — क्या कोई भूल हो गई ~~क्या भाग्य खराब है~~, या क्या कारण है उनका पता नहीं चलता। ~~पता निकालने का कोई सहारा भी तो न था~~। हां दिल में चाह थी और उसी का भरोसा था, पर अबतक तो इससे कुछ बनता नजर न आ रहा था। इसके सिवा और चारा भी क्या था कि उनके मिलने की चाह और तीव्र की जाये एक बार श्री स्वामी जी ने टैलीफून एकसचैंज का दृष्टान्त देकर समझाया था कि उस विभु (भगवान) ईश्वर के सम्बंध से हम सभी जीव एक दूसरे से जुड़े हैं। जिसको उस Exchange को बुलाना आता है, और वह दूसरे का नम्बर जानता हो तो इसी एकसचैंज से उससे मिल सकता है, चाहे

वह कितनी दूर ही क्यों न हो — चाहे किसी दूसरे लोकमें भी क्यों न हो। पर हमें तो वह भूलि आती नहीं। जैसे कैसे बन सकता था, उनसे मिलने की चाह बढ़ाती थी और उनके दर्शन न होने से अपनी ही कमी को कोसता था। इतना सुन्दर अवसर प्राप्त हुआ — अपने प्रमादके कारण उसका पूरा लाभ न उठा सका। फिर भी दिलमें एक हलकी सी रोशनी कभी कभी दौड़ जाती थी, और यह विश्वास बनता था कि श्रीस्वामी जी दर्शन जरूर देवेंगे — पर वह समय कब आवेगा, इसका कुछ पता न चलता था। श्रीस्वामी जीं से एक बार सुना था कि एक जगह यह १२ वर्ष होगये, फिर नहीं गये, इससे कहता होसला गिरता था। फिर अपने मिलनेकी चाह आशा दिलाती कि आप जरूर मिलेंगे। इसी उधेड़ बुन करते १९०६ की सरदीयां शुरू हो गईं.

इन्ही सरदीयों में मैं एक बार लाहौर गया था, तो विचार आया कि क्यों न जिस दुकान से आत्मविलास लाता हूं, उसी से पता करूं, शायद कुछ पता चले। मैं उस दुकान पर गया। दुकानदार कुछ पुस्तकें बेचने अपने ग्राहकों से बात-चीत कर रहा था। मैं प्रतीक्षा करने लगा कि थोड़ा एकांत हो तब बात करूं। उचित समय पर मैं ने विनीत भावसे आत्मविलास के लेखिकके बारे में पूछा - उसी वकत एक सज्जन उनसे बात-चीत कर दुकानसे नीचे उतर रहे थे। उस दुकानदार ने कहा कि लेखिक एक बड़े विद्वान महात्मा हैं, उनके कई राजेभी शिष्य हैं और तभी उनने कहा कि वह जो पंडित अभी अभी दुकानसे नीचे उतरे हैं, वह उन महात्मा को विशेष रूप से जानते हैं। मैं उन पंडित जी का नाम पता पूछ जल्दी से दुकानसे उनको खोजने चल पड़ा, पर वह नहीं मिले। एक आशा लगी थी, पर काम न बना। चलो एक तो और आदमी का पता लगा जो आत्मविलास के लेखिक को जानता है। मैं चाहता था कि स्वयं मिलकर पता करूं कि वह महात्मा वही है जो हमारे पास ठहरे थे। यह सब बातें पत्र से नहीं जान सकता था। उनके घर कुरौली का पता मेरे पास था, पर वह तो लाहौर आये थे, पता नहीं कब वापिस जावेंगे। ऐसा विचारकर मैं वापिस स्यालकोट चला गया

चन्द दिनों बाद मेरा फिर लाहौर आना हुआ। मैं स्टेशनके सामनेसे जा रहा था कि अकस्मात स्यालकोट के दो सज्जन मिले ~~(एकका नाम काकाराम था, जो स्यालकोट राम तलाई मन्दिरमें भजन कीर्तन करते थे)~~। वह दोनों करांची से अपने गुरुदेव को मिलकर आ रहे थे. ~~(उनके गुरुका नाम बंगाली महात्मा था, वह स्यालकोट आए थे, तब गीता भवन भी पधारे थे)~~. मैं ने जब सुना कि वह स्यालकोट से करांची अपने गुरु दर्शन को गये थे, तो मेरे दिलमे अपने 'श्री स्वामी' जी को मिलने की इच्छा तीव्र रूपसे जाग उठी। मैं ने वहीं निश्चय किया कि आज स्यालकोट न जाकर मैं कुराली जाऊंगा ~~(मेरे साथ एक और आदमी किशोरीलाल था, मैं ने उसके हाथ घर तथा कारखाने संदेश दे दिया कि मैं चन्द रोज बाद वापिस आऊंगा, कोई फिकर न करें)~~ मेरे पास कोई सामान न था, वही कपड़े थे जो बदन पर थे। वह दिन २४ या २५ दिसम्बर का था, सरदी खूब थी, मैं गरम सूट पहने था और मेरे पास एक गरम ओवरकोट भी था मैं उसी रात की गाड़ी स्वार हो, सरहंद से गाड़ी बदल सुबह कुराली पहुंच गया। पता करते करते उन पंडितजी के घर आ गया। वह समय उनके नाश्ते का था — मेरे मना करने पर भी मुझे एक कटोरी हलवा खाने को दिया। उस दिन मंगलवार था, मैं व्रत करता था, पर उनके प्रेमसे मैं ने वह खा लिया। बात-चीत होने पर जब उनको पता चला कि मैं उन महात्मा जी के दर्शन करना चाहता हूं, तो उनने मुझे पं० हरदेव शर्मा

सोलन वालों से मिलना चाहीये। उन्होंने यह भी कहा पहले वह महात्मा उनसे मिला करते थे, पर अब नहीं मिलते और शायद न ही मिलें। उनने एक बात और भी कही कि अगर मुझे उन महात्माजी के मिलने का प्रेम है, तो मुझे (उन पंडित जी को) कभी भी न मिलना चाहीये, न ही उनके साथ किसी तरह का पत्र व्यवहार करना चाहीये। मैं ने उनकी सब बात मान ली और इसीलीये कभी किसी को यह नहीं बताया कि मैं उनको मिला हूं। तबसे मैं ने उनके साथ किसी तरह का भी सम्बंध नहीं रखा। यह आखिर वाली बात उन्होंने क्यों कही इस का कारण अब तक पता नहीं।)

मैं उसी वकत बस से कालका के लीये रवाना हो पड़ा। यह सब स्थान मेरे पहले देखे न थे। वहां कोई परिचित भी न था। ~~रास्ते में पता चला कि कालका पहुंचते रात पड़ जावेगी। मुझे रात कालका रह सुबह ही सोलन के लीये गाड़ी मिलनी था। बस में बैठे कालका निवासीयों को बात चीत में यह बताया~~ कि मेरे पास बिस्तर वगैरह कुछ नहीं और रात कालका ठहरणा है, ~~उस पहला सब ऐसे होगया। मैं ने सफर में रात भर का आसरा मांगा नहीं। किसी ने कुछ राय दी नहीं~~ सोचा, चलो जो होगा देखा जावेगा। बस कालका पहुंची (~~लोग उतर उतर कर अपने अपने स्थान को जाने लगे, मुझे कहा जाना है, यह मैं न सोच सका~~) स्टेशन की तरफ गया, मुसाफरखाना खचा खच भरा था, बाजार आया। सारा दिन बिना भोजन हो गया था, एक हलवाई से मिठाई और दूध लीया, एक धर्मशाला का पता कर ~~जो कहे बाजार में थोड़ी दूर पड़ती है~~ ~~वहां चला गया~~। रात काफी हो चली थी, धर्मशाला के पंडितजी ने उपर एक कमरा मुझे बता दिया। वहां एक खाट थी, उसपर लेट गया। दिसम्बर के आखरी दिन, कालका पहाड़ी स्थान, २८ घंटे से ज्यादा समय की यात्रा की थकावट और सारा दिन भोजन न मिलने से शरीर थक गया था। इसी सरदी और थकावट से मैं खाट पर लेटा, बिस्तर पास नहीं था, तकीये की जगह पगड़ी को रखा, आधा ओवरकोट नीचे बिछा, आधा ऊपर लेकर लेटा, तो टांगे कोट से बाहर और पैर सुन्न होने लगे। उठकर बैठ गया, पर थकावट से फिर लेटना पड़ा। लेटें भी तो कैसे। अभी अभी मिठाई खाकर दूध पिया था, सो अब प्यास लगी। मैं कमरे से बाहर निकल, नीचे जा उन पंडितजी से पानी मांगने के लीये सीढ़ीयों से ज्योंहि नीचे उतरने लगा, तो एक कुत्ते ने जोर जोर से भौंकना शुरु कर दिया, वहां सब अंधेरा था। मैं घबराकर वापिस अपने कमरे में आ गया, पर बिना पानी के प्यास कैसे मिटे। मैं ने फिर नीचे उतरने की कोशिश की, तो कुत्ते ने फिर चिल्लाना शुरु कर दिया। मैं ने अपने कमरे से पंडितजी, पंडितजी की बुहत आवाजें लगाईं, पर किसी ने कुछ उत्तर न दिया। ~~ऐसा लगता था कि मैं उस मकान में अकेला ही उस कुत्ते के हवाले मेरे दिया गया था~~। इसी तरह प्यास से बेचैन थकावट से चूर, सरदी से सुकड़, अन्धेरे व सुनसानपन से घबरा कर मैं खाट पर पड़ा रहा। रात आधी से ज्यादा बीत चुकी थी, अब चन्द्रमा निकल आया था। उस कमरे की खिड़कीयां बाहर गली में खुलती थी। खिड़की से बाहर देखा तो सामने एक मैदान सा था उसमें एक नल से पानी की मोटी धार बह रही थी, पर मेरी किस्मत में पानी का एक घूंट न था। ~~नीचे सुनसान था। कभी खाट पर जाता, कभी खिड़की से बाहर झांकता कि शायद कोई आदमी नजर पड़े, पर वहां प्यासे की प्यास भड़काने को पानी के नल का शब्द ही था।~~ सरदी से बचाव के लीये सूर्यका ध्यान करता या भास्करी प्राणायाम का और प्यास के लीये शीतली की धारणा लेता। चान्द तो सामने अमृत किरनें बिखेर रहे थे और वरुण देवता जलकी धार बहा रहे थे, पर मेरे लीये ~~यह सब ऐसे ही था~~। सूखे होठों पर जीभ फेरते फेरते जीभ थक गई, गलेका रस भी सूख गया, टांगे सिकोड़ते और लम्बी करते टांगे थक गई, ~~शरीर के कभी किसी भाग~~

~~तो कभी किसी लगाको ओवरकोट के नीचे करते करते सारा शरीर थक गया,~~ तब या तो बेहोशी होगई या नींद आ गई फिर जल्दी ही मैं क्या देखता हूं कि रात खतम हो रही है, कुछ औरतें पानी के बर्तन लेकर वहां नल पर आई हैं, मैं खिड़की पर जाता हूं, एक औरत को पानी के लिये प्रार्थना करता हूं, तब वह मेरे को पानी कैसे दे यह सोचकर मैं ने अपनी पगड़ी नीचे लटका दी ताकि वह पगड़ी का किनारा गीला कर दे और मैं पगड़ी ऊपर खींच कर उससे पानी निचोड़, प्यास बुझा लूं – मैं घबरा कर उठा, खिड़की से बाहर देखा तो वहां कोई भी नहीं। तब पता चला कि यह स्वपन ही था। फिर अभी लेटा ही हूं कि ऐसा प्रतीत हुआ कि किसी खाली बर्तनमें नलकेसे पानी भरनेका शब्द हो रहा है, ध्यान से सुना तो ठीक ऐसा ही शब्द था। अब तो जरूर कोई नल पर आया है, यह समझकर फिर खिड़की से देखा, तो कोई भी न था। पता नहीं ऐसा कितनी बार हुआ, पर रात बीत ही गई) जब जागा, तब प्यास नहीं थी, थकावट भी कुछ दूर हो गई थी, पर सरदी काफी थी। मौका मिलते धर्मशाला [मिन्च] छोड़ मैं स्टेशन की तरफ गया। वहां शौच आदिसे निवृत्त हो, जलपान कर मैं कालका से शिमला जानेवाली पहिली गाड़ी से सोलनका टिकट ले सवार हो गया। आज भी मुझे जब उस सरदी की रातकी याद आती है तो ~~ऐसा लगता है कि~~ वह रात मेरे सामने तसवीर बनी खड़ी है। पर गुजर गई सो गुजरान, क्या झोंपड़ी क्या वैरान। स्वामी गोविन्दा नन्द जी ने ~~लिखा है~~ कहा है –

राह प्रेम विच मारू बदल, जालिम बिजली कड़के
औहनां मनाज़िल तै कर करनी जिन्हा दा दिल धड़के ॥

कालकासे सोलनकी पहाड़ी यात्रा मेरी पहली ही पहाड़ी प्रदेश की गाड़ी से यात्रा थी। सोलन पहुंच कर, मैं श्री हरदेवजी के मकान पर गया। वहां से पता चला कि वह सोलन में नहीं हैं। वहांसे किसी और पंडित जी का पता चला, तो मैं उनके घर जाकर उनको मिला। सारा वृतांत कह सुनाया। मैं ने अच्छी तरह पता कर लीया कि 'श्री स्वामी जी' ही पुस्तकोंमे अपना नाम श्रीमद्मृतवाग्भव आचार्य लिखते हैं। उनके रूप रेखा, स्वभाव, खान पान, रुची वगैरह का विस्तार से वर्णन कर, मिलान कर लीया। आप को आंवले पसंद हैं और आप जो जो कीर्तन, जिस जिस स्वर में करते थे, वह ~~स्वयं~~ स्वयं गाकर अच्छी तरह मिलान कर लीया। उनके प्रिय श्लोक 'यामामनन्ति मुनयः' का भी जिकर किया, तब पता चला कि वह ~~श्लोक ही~~ उनकी सम्पादित एक पुस्तक पञ्चस्तवी के चौथे अध्याय का श्लोक है (~~पञ्चस्तवी~~)। वहां से उन पंडित जी ने पं० हरदेव जी के घर के नजदीक एक स्थानसे मुझे कुछ पुस्तकें दी, जो श्री स्वामी जी की ही छपवाई हुई थी, उनमें राष्ट्रालोक, सप्तपदी, पञ्चस्तवी और परशुराम स्तोत्र थे। मैं वह पुस्तकें ले, प्रणाम कर वापिस चल पड़ा। सोलन से कार से कालका आया और उसी दिन रात की गाड़ी से स्यालकोट चला गया। इस तरह इस यात्रा से तकरीबन दो वर्ष पहले लाहौर के एक होटलमें आये विचारका पक्का समर्थन होगया कि अपने वह 'श्री स्वामी जी' ही आत्म विलास के लेखक हैं। स्यालकोट वापिस आ गीता भवन पर सारा वृतांत कहा। सब प्रसन्न हुए कि कुछ तो पता चला। सोलनमें यह भी सुना था कि उन लोगों को भी काफी समयसे दर्शन नहीं दिए। इस से दिल घबराता था, पर फिर ख्याल आता था,

कि जब कृपा कर आपने दर्शन दिये, जाती बार परिचय की झलक भी दे दी, अब इनके मिले प्रेमियों के दर्शन भी हो गये, तब उनकी ही कृपा से दर्शन जरूर होंगे। यही भरोसा था और यह दिन प्रतिदिन बढ़ रहा था। श्री हरदेव जी से पत्र व्यवहार शुरू किया। उनको भी कई वर्षों से दर्शन न हुए थे। उनसे यह भी पता चला कि वह कई कामों से लाहौर आते हैं और वहां एक व्यक्ति सेठ सत्य नारायण के घर ठहरते हैं। सेठ जी का पता भी उन्होंने लिख दिया, वह अर्जुन नगर में जो शाहलमी के बाहर पड़ता है, रहते थे।

अब बात आ गई Feb, मार्च, १९४७ की। मैं दफ्तर के काम से लाहौर गया था। उस दिन सोमवार था और तारीख 17th Feb. 1947 थी। मुझे उसी दिन वापिस स्यालकोट चले जाना था इसलीये सामान कुछ पास न था। दोपहर के समय अवकाश मिलने पर मैं पं० हरदेव जी को मिलने सेठ सत्य नारायण के मकान पर गया। मकान तीन मंज़ला था, नीचे घंटी (Call Bell) लगी थी। मैं ने घंटी दबाई, और इस प्रतीक्षा में था कि अभी कोई पूछेगा कि क्या काम है, तो मैं कहूंगा कि पं० हरदेव जी से मिलना है, इसी विचार से जैसे ही मैं ने ऊपर देखा, तो क्या देखता हूं कि "श्री स्वामी जी" मकान की छत से नीचे मुझे देख रहे हैं। मेरी प्रसन्नता का क्या कहना। मैं बिना जाने मकान की सीढ़ीयों पर दौड़ता दौड़ता उपर चला गया। वहां सीढ़ीयों में हो 'श्री जी' के दर्शन कर मैं निहाल होगया। उनके साथ ही नीचे के कमरे में आया, तो शाम तक उनके पास बैठ बातें ही करता रहा। वहां भरतपुर के पं० गोविन्द जी मिश्र व बांके बिहारी जी के भी दर्शन हुए। शाम को घूमने के लीये श्री वैष्णवी दास जी के साथ गये थे। वहां पता चला कि स्वामी जी पहले ही उन लोगों को कह रहे थे कि आप बुद्धवार को स्यालकोट जावेंगे। मैं इसलीये वहां दूसरे रोज़ (मंगलवार) भी ठहर गया और श्री स्वामी जी के प्रोग्राम अनुसार तीसरे दिन (19.2.47) श्री स्वामी जी के साथ स्यालकोट आया। श्री स्वामी जी मेरे साथ मेरे मकान पर ही पधारे। सब सतसंगी प्रेमियों को पता चल गया तो वहां ही दर्शन को आगये। सतसंगीयों ने जो मेरी ड्यौटी लगाई थी कि मैं ही श्री स्वामी जी को खोज कर लाऊं, उसको श्री स्वामी जी ने अपनी कृपा दृष्टि से मेरे द्वारा ही पूरा करवाया। उनकी इस कृपा को याद करते, अब भी मन प्रसन्न हो जाता है, तो उस वक्त की प्रसन्नता का वर्णन कैसे हो। इस तरह श्री स्वामी जी के दर्शन तकरीबन दो साल बाद कर मैं कृतार्थ होगया।

जा की रही भावना जैसी, प्रभु मूरत तिन देखी तैसी ॥

क० न० आनन्द
श्रावण शुक्ल पूर्णीमा - रक्षाबंधन
कलकत्ता

× 23rd. Feb. 1947. सब मिलकर जम्मु गये, वहां श्री बलजिनाथ जी को भी दर्शन करवाए

4th. March 1947 - जम्मु से वापिस आकर श्री स्वामी जी कार से लाहौर गये। उसी दिन लाहौर में हिन्दू मुसलिम दंगा होगया था।

श्रीः

# श्रुतनागभूषणाचार्य जी

[ कि मैं जिनके सम्पर्क में रहा ]

उन्हीं के

## कुछ संस्मरण

डॉ. श्रीनाथ तिक्कू ए. एम. एस. (बी एच यू)
शास्त्री (डी. ओ. एल.)
भू. पू. प्रिंसिपल एवं चिकित्सा अधीक्षक
आयु. यू. तिब्बिया कालेज
दिल्ली

श्रीः

## वन्दना

भस्मना च्छादितो यद्वत्
स्फुलिंगो न प्रकाशते ।
स एवोपत-प्रमादेन
स्पृष्टो दाहं तनोति च ॥ १॥

तथैकापाततो यस्य
सर्वांगम् विकासिनीम् ।
शक्तिं च तेजसो गुप्ताम्
कोश्चिदेवेह वेत्त्यहो ॥ २॥

पीयूषवर्षिणी वाणी
ससरसा काव्यचातुरी ।
सर्वतोभद्रपाण्डित्यम्
'प्रात्मगुप्ति' विशेषता: ॥ ३॥